क्यूबाई कवि निकोलस गीिल्यिन की यह कविता हम धर्मवीर भारती के अनुवाद संकलन 'देशान्तर' से पुनर्प्रकाशित कर रहे हैं । कविता दो भिखारी बच्चों का मार्मिक चित्र प्रस्तुत करती है जो नस्ल के आधार पर भिन्न हैं । नस्लभेद के बावजूद भूख ने उनकी दशा और भविष्य को एक कर दिया है । आज दुनिया में ऐसे बच्चों की तादाद उस वक्त से कई गुना बढ़ चुकी है जब यह कविता लिखी गयी थी ।

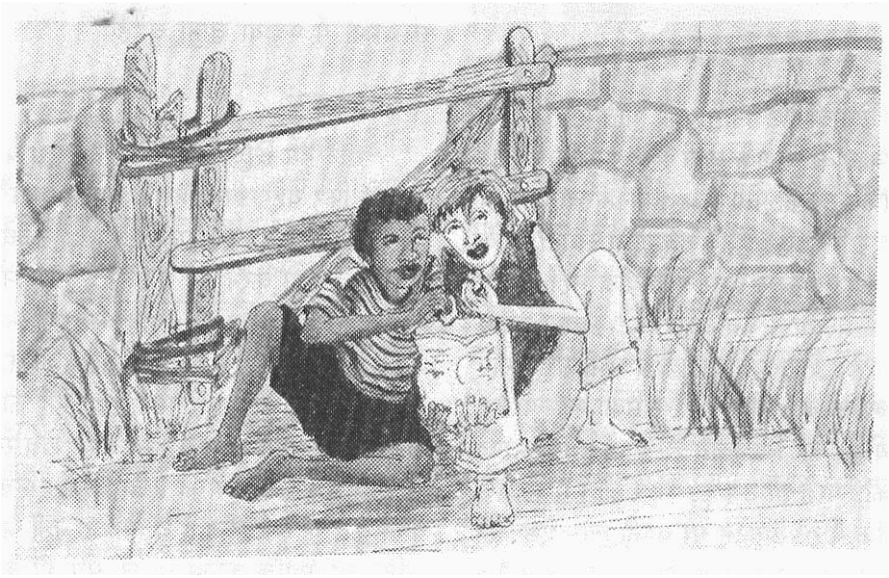

दो बच्चे

एक मूल अभिशाप की दो सुकुमार शाखें
दो बच्चे
भयावनी रात के पंजे में,
एक फाटक के सहन पर बैठे हुए
दो भिखमंगे बच्चे, जख्मों से भरे हुए
एक ही टीन के डिब्बे से निकाल निकाल कर
कुछ खाते हुए

भूखे कुत्तों की तरह
जैसे लहरें तट पर कूड़ा फेंक जाती हैं
वैसे ही मेजपोशों ने यह जूठा खाना
फेंक दिया है

दो भिखमंगे बच्चे
एक गोरा है दूसरा काला
उनके सर एक दूसरे से टिके हैं
दोनों में जूं हैं मैल है

उनके पांव नंगे हैं
उनके मुंह चलते हुए अनथक जबड़ों वाले मुंह
बासी खट्टे और गन्दे खाने
फिर दो हाथ हैं
एक गोरा : एक काला

कैसी विचित्र और कितनी अटूट एकता है
डरावनी रातों और भूख ने उन्हें
एक डोरे में गूंथ दिया है
और गलियों में बीतने वाली उदास शामों ने
और भूखी सुबहों ने जब दिन नशे में धुत
आंखों से जागता है

दो कुत्ते के पिल्लों की तरह
वे पास पास बैठे हैं
दो सीधे सादे पिल्लों की तरह
एक गोरा : दूसरा काला
क्या जब आह्वान आयेगा
तब भी वे इसी तरह साथ साथ चलेंगे
गोरे और काले
एक ही मूल अभिशाप की दो टूटी
सुकुमार शाखें

दो बच्चे ◆